भारत में एक्जिट पोल की प्रासंगिकता

हमारे देश भारत में मतदान के उपरांत एक्जिट पोल का इंतजार स्वभाविक रूप से किया जाता है। कई ऐसी एजेंसियां भी स्थापित हो चुकी है जिनका काम ही चुनावों के संभवित परिणाम का एक्जिट पोल करना है। किन्तु भारत जैसे देश में जहाँ बहुदलीय व्यवस्था है वहाँ एक्जिट पोल कितना प्रभावी हो सकता है यह एक गंभीर प्रश्न है।

भारत जहाँ मुद्दों की कमी नहीं, हर वर्ग हर क्षेत्र एवं प्रत्येक व्यक्ति की अपनी समस्याएं हैं, जातियों का बोलबाला है, वृहद जनसंख्या है, क्षेत्रीय आधार पर कई प्रकार की विविधता है वैसे देश में ऐसा कोई तंत्र बन भी सकता है जो चुनाबों के सटीक परिणामों का आंकलन लगा पाए ?

मेरा मानना है कि उसी एक्जिट पोल को सही माना जा सकता है जो मायावती के दलित मतदाताओं का एक्जिट पोल कर पाए जो सटीक व सत्य साबित हो। इसका अर्थ है कि ऐसा एक्जिट पोल जो ये बता पाने में सक्षम हो कि सेवा बस्तियों में जहाँ सत्तर वर्षों से सरकारें नहीं पहुंच पाई, वहाँ के मतदाताओं का मूड क्या है ? 2007 के उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव में मायावती बहुमत के साथ सत्ता में आईं किंतु उस दौर में ऐसा कोई एक्जिट पोल नहीं आया था जो इस जीत का पूर्व में ही घोषणा कर पाए।
भारत के लगभग सभी मुख्य गांव के बाहर कई टोली/टोला/ मोहल्ला होते है जहाँ न तो कोई न्यून एजेंसी पहुंच पाती है और ही कोई सर्वे की एजेंसियां ही पहुंच पाती। कई बार तो ऐसी जगहों पर राजनीतिक दलों के कार्यकर्ता भी नहीं पहुंच पाते। जबकि इन छोटी छोटी बस्तियों में हजारों की संख्या में मतदाता अपने मराधिकार का प्रयोग करते हैं। कई बार इन क्षेत्रों के मतदाताओं की संख्या दस हजार से ज्यादा की होती है। ऐसी स्थिति में एक्जिट पोल की प्रमाणिकता भविष्य बताने वाले तोते के कार्ड की तरह ही है। जिसका उद्देश्य भविष्य जानने से ज्यादा मनोरंजन का रह गया है।

भारत में एक विधानसभा क्षेत्र में एक लाख से लेकर चार लाख तक मतदाता होते हैं जिनमें ढाई से तीन लाख तक मतदान होता है। कई बार जीत-हार का अंतर हजार से दो हजार तक सीमित हो जाता है। ऐसे में आंकलन एक बेईमानी है या छलावा अथवा एक रूढ़िवादी परंपरा जिसे बस निभाई जा रही है। किंतु यह भी सत्य है कि एजेंसियां इस बात का आकंलन करने में सक्षम है कि जनता की भावना सरकार को एक और मौका देने के पक्ष में है या इस सरकार की विदाई जे पक्ष में।

पिछले कुछ चुनावों को देंखे तो ज्यादातर चुनाव परिणाम इस आंकलन को ही दर्शाते हैं। 2017 के

विधानसभा चुनावों को उदाहरण के तौर पर लिया जाए अथवा 2019 के लोकसभा चुनाव की बात हो या 2020 के दिल्ली विधानसभा का चुनाव हो अथवा बंगाल का चुनाव। सभी चुनाव इसी बिंदु पर केंद्रित रहे कि वर्तमान सरकार बदलनी है अथवा इसे एक और मौका देना है। यदि मौका देना है तो प्रचंड बहुमत के साथ एवं पराजित करना है तो बुरी तरह।
पिछले कुछ वर्षों से भारत का चुनाव भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना के प्रारंभिक वर्षों के आम चुनावों के अनुरूप ही हो गया है जिसमें प्रधानमंत्री के नाम पर विधायक चयनित होते थे। आज का चुनाव अमेरिकी राष्ट्रपति के चुनाव की तरह भी होता जा रहा है जिसमें पार्टी के नेता का चेहरा महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। ऐसे में उम्मीदवार की भूमिका कम अथवा खत्म सी होती जा रही है।

भारत का लोकतंत्र पचहत्तर वर्षों बाद नए अवतार में सामने आ रहा है। अब आम आदमी समाज के किसी प्रमुख व्यक्ति के पीछे खड़ा नहीं होना चाहता। सोशल मीडिया के प्रभाव एवं क्रय शक्ति के बढ़ने के कारण प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को विशिष्ट माने बैठा है। अब वो किसी मठाधीश अथवा प्रधान के वैचारिक छतरी के नीचे अपने विचार तय करने को बाध्य नहीं है। उसके अपने विचार हैं और समझ भी। वो सुन सबकी रहा है किंतु निर्णय उसके स्वयं का ही होता है। यह एक बड़ा कारण है कि अस्सी नब्बे के दशक के चुनाव विश्लेषक यथा प्रणव राय, योगेंद्र यादव जैसे व्यक्ति चुनावों में अप्रासंगिक हो गए। ऐसी एजेंसियां अथवा पत्रकार जो दिल्ली स्थित किसी टीवी चैनल के कार्यालय में बैठ कर सुदूर गांवों के मुद्दों को न सिर्फ सेट करते थे अपितु चुनावों में जनता के मत को प्रभावित भी करते थे धीरे धीरे हाशिये पर चले गए। उनका प्रभाव खत्म हो गया। यह भी एक बड़ा कारण है कि पूर्व की सत्ताधारी पार्टियां दिनोंदिन खत्म होती जा रही है क्योंकि इन पार्टियों के पक्ष में माहौल बनाने वाली शक्तियां ही अप्रासंगिक हो गई है। जनता जिसका प्रतिनिधित्व सोशल मीडिया कर रहा है और जिसने आम आदमी को आवाज दी है वो प्रभावी होता जा रहा है।

शिक्षा के बढ़ते स्तर के कारण भी एक बदलाव दृष्टिगोचर होता है कि व्यक्ति निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र व आत्म निर्भर हो गया है। उसे प्रभावित करने वाले पुराने टूल्स प्रभावी नहीं रहे। व्यक्ति परिपक्व मतदाता होने के साथ साथ आत्म केन्दित मुद्दों पर ही मरदान करने लगा है। सभी के अपने मुद्दे है और अपना मत भी। सभी जागरूक हैं और अपना हित-अहित समझने लगे हैं। एक एक मत स्वतंत्र है। ऐसे में भारत में एक्सिट पोल कितना प्रभावी रह गया है यह कहना नामुमकिन सा साबित हो गए हैं।

आज चुनाव लड़ने के टूल्स भी बदल चुके हैं। मशीनरी और तंत्र भी बदल चुका है। धन-बल किसी की बपौती नहीं रही। सभी सक्षम हो गए हैं। ऐसे में एक्जिट पोल पर विश्वास करने का कोई कारण रह नहीं जाता।
जनता की भावना महत्वपूर्ण है जो बड़े केन्वॉश की तस्वीर बताने में तो सक्षम है किंतु सीटों का सटीक आंकलन करने में नहीं। यह भी सत्य है कि धरातल पर रहने वाली शक्तियां इस बात का आंकलन करने में समर्थ हैं कि किस उम्मीदवार ने अपना चुनावी प्रबंधन किस प्रकार से किया। इस आधार पर किया गया एक्जिट पोल सही साबित हो सकता है किंतु उसके भी शत प्रतिशत सत्य होने की गारंटी नहीं हो सकती। एक्जिट पोल महज एक मीडिया पर चर्चा का विषय बन कर रह गया है।

लेखक लोकप्रिय यू ट्यूब चैनल

लोकवाणी के संपादक हैं